संपादकीय

तुलसी ने अपने एक दोहे में कहा है,

"खेती न किसान को, भिखारी को न भीख बलि।
बनिज को बनिजन चाकर को चाकरी।"

यह कहना गलत नहीं होगा कि भारत में जब लोकतंत्र नहीं था तब भी, और जब लोकतंत्र आया तब भी किसान शोषण से मुक्त नहीं हुए। दरअसल किसान विश्व का एक ऐसा समाज है जिसके बिना जीवन की परिकल्पना असम्भव है, फिर भी हमारे यहाँ प्रकारांतर से किसान उपेक्षा के शिकार होते रहे हैं और आज भी हो रहे हैं। इस उपेक्षा और अपमान का उदाहरण है हमारे देश के किसानों की आत्महत्या। साहित्यकार सामाजिक यथार्थ का ही पुनर्सृजन करता है, इसलिए किसान किसी न किसी रूप में साहित्य में उपस्थित रहा है। आधुनिक काल से पहले साहित्य में आमजन के सुख-दुख, आशा-निराशा और जीवन -संघर्ष को प्रमुखता से अभिव्यक्ति नहीं मिली। अकाल के वर्णन, सामाजिक दुर्दशा के चित्र प्रसंगवश कहीं न कहीं किसान जीवन की ओर संकेत रचनाओं में अवश्य दिखाई पड़ता है।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में से किसान का जीवन कथा-साहित्य में हमेशा से एक मुद्दे की तरह रहा है। आधुनिक काल में बहुत से महाकाव्य लिखे गए हैं, जिनमें अपने समय की चेतना तथा महत्वपूर्ण सवालों को अभिव्यक्ति मिली है। लेकिन यह भी सच है कि एकाध दूसरे खंडकाव्य को छोड़कर किसान-जीवन पर केन्द्रित काव्य नहीं लिखे गए। साथ ही किसान को लेकर, कथा साहित्य भी लिखा गया और कविताएं भी रची गईं। साहित्य में किसान-जीवन का चित्रण व्यापक रूप से न आ पाने का कारण समाज परिवर्तन में वर्गों की भूमिका की पहचान सम्बंधी सोच भी रही। किसान की अपेक्षा श्रमिकों को अधिक महत्व प्राप्त हुआ है। क्रांति में औद्योगिक मजदूर वर्ग को नेतृत्वकारी भूमिका में देखा गया, न कि किसान को। मार्क्सवादी विचारधारा के प्रभावस्वरूप जो आम जन कविता के केन्द्र में आया उसमें किसान अलग से कोई वर्ग नहीं, बल्कि सर्वहारा के एक हिस्से के रूप में था।

प्रगतिवादी-आन्दोलन ने किसान तथा श्रमिकों को कविता में मुख्य स्थान दिया। किसानों की आबादी, महत्त्व व शोषण को देखते हुए उनपर कविताएं उतनी मात्रा में नहीं हैं जितनी कि होना चाहिए थी। लेकिन ऐसा नहीं कहा जा सकता कि कविता से किसान गायब है। साम्राज्यवादी अंग्रेजी शासन के खिलाफ

मुक्ति-संग्राम में किसान का शोषण साहित्य में विशेषकर कविताओं में अभिव्यक्त हुआ। यह एक सत्य है कि आजादी के बाद भी किसान की हालत बहुत नहीं बदली। अंग्रेजी साम्राज्यवादी शासक किसानों के अनाज को खलिहान से उठा ले जाता था, लेकिन आज की शोषक नीतियां फसल पकने से पहले ही खाद - बीज के माध्यम से लूट लेती हैं। यह किसान के श्रम का शोषण ही है, जिसके कारण उसकी ऐसी दयनीय हालत है।

वैश्वीकरण, उदारीकरण व निजीकरण की नीतियों ने किसान की हालत और बिगाड दी है। वैश्वीकरण की नीतियों के चलते समाज में असमानता आयी, किसानों ने कर्जे के बोझ के कारण बड़ी संख्या में आत्महत्याएं की हैं। सड़क से लेकर संसद तक में यह चर्चा का विषय रही है। 21 वी सदी में किसानों की इस स्थिति का आकलन साहित्य में किसतरह किया जा रहा है, इस विषय को मद्दे नज़र रखते हुए आखर का यह विशेषांक आया है।

इस अंक में शोधालेख ,कविता, कहानी तथा पुस्तक समीक्षा आपके अवलोकनार्थ है। आशा है आपको यह अंक पसंद आए।

इति नमस्कारान्ते....

प्रधान संपादक

प्रो. प्रतिभा मुदलियार